वाद-विवाद होने पर भयभीत न हों (15:1-18)

मुझे वाद-विवाद, गरमा-गरम बहस और शोर अच्छा नहीं लगता। मैं किसी व्यक्ति को किसी दूसरे के साथ नाराज़ नहीं देख सकता। मुझे कई लोगों द्वारा छेड़े गए वाद-विवाद के कारण पैदा हुई कुरूपता और छोटेपन पर अफसोस होता है। विवाद मुझे शारीरिक रूप से बीमार कर देता है। फिर भी, विवाद जीवन का एक सत्य है चाहे वह परमेश्वर के लोगों में ही क्यों न हो (मत्ती 10:34-36; लूका 12:51-53; 1 कुरिन्थियों 11:18,19)। प्रेरितों 15 में हमें कलीसिया में विवाद के दो उत्कृष्ट उदाहरण मिलते हैं: 1 से 35 आयतों में, हम शिक्षा सम्बन्धी असहमति देखते हैं, 36 से 41 आयतों में हमें विचारों की भिन्नता देखने को मिलती है। पहला विवाद मण्डली में है;[1] जबकि दूसरा विवाद दो मसीहियों के बीच है। प्रश्न यह नहीं है कि "क्या कलीसिया में कोई विवाद होगा?" बल्कि यह है कि "विवाद होने पर उसका हल कैसे किया जाए?"

पिछले पाठ में, हमने 15:1-33 में एक ज्वलन्त मुद्दे की समीक्षा की थी। इस और अगले पाठ में, यह जानने के लिए कि कलीसिया में उठे इस विवाद का पौलुस और अन्यों ने कैसे समाधान निकाला, हम उसी बुनियादी हवाले में जाएंगे।[2] बाद में, मसीहियों में व्यक्तिगत असहमतियों के सम्बन्ध में अध्ययन करने के लिए हम अध्याय 15 की अन्तिम आयतों की समीक्षा करेंगे।

क्या विवाद स्वयं समाप्त हो जाएगा? (15:1,2)

कुछ लोग ऐसा कहते हुए कि जैसे विवाद है ही नहीं, विवाद को नकारने में ही इसका समाधान समझते हैं। सलाहकार इसे "पीछे हटना" कहते हैं और कहते हैं कि ऐसा करने वाले व्यक्ति के मन में अपने या जिसके साथ उसका विवाद है, के प्रति कोई सम्मान नहीं है। इस ढंग से कभी भी, किसी मामले का हल नहीं होता। जब झूठे शिक्षक यरूशलेम से आए (आयत 1), तो पौलुस और बरनबास ने यह आशा करके कि अपने आप सब कुछ

ठीक हो जाएगा, विवाद की उपेक्षा नहीं की। बल्कि, उन्होंने इसका सामना किया (आयत 2)। मण्डली में विवाद का हल देर-सवेर किया जाना आवश्यक है और समाधान देरी की अपेक्षा जल्दी करना आसान है।[3]

कई लोग स्वयं को उन मण्डलियों से जिनमें कोई समस्या होती है, विवाद से "हटने" की अति कर देते हैं। मैं कई सदस्यों को जानता हूं जिन्होंने वर्षों पहले आराधना सभाओं में आना इसलिए बन्द कर दिया "क्योंकि कलीसिया में वहां कोई समस्या थी।" ऐसा कोई भी संकेत नहीं मिलता कि अन्ताकिया की मण्डली में से किसी ने भी कहा हो, कि "यदि उनका झगड़ा और विवाद इसी प्रकार रहेगा, तो मैं तो चलता हूं!" किसी मण्डली में उत्पन्न विवाद को सुलझाने में सहायता करने से पहले, हम में से कइयों को विवाद के प्रति अपने व्यवहारों से निपटने की आवश्यकता है। हम में से कोई भी परेशानी पसन्द नहीं करता,[4] परन्तु जब मण्डली में यह दिखाई देने लगे, तो हमें इसे दूर करने में सहायता करनी चाहिए, इससे भागना नहीं चाहिए।

क्या लड़ने का लाभ है? (15:2)

कलीसिया में विवाद का सामना करने से पहले, यह तय करना जरूरी है कि असहमति किस बात पर है। क्या हम शिक्षा सम्बन्धी झगड़े की बात कर रहे हैं (जैसा कि प्रेरितों 15 के मामले में हुआ था), या हम किसी की भावनाओं के आहत होने की बात कर रहे हैं (जैसा कि प्रेरितों 6 में हुआ था)? मेरा यह अनुभव रहा है कि किसी मण्डली में शिक्षा सम्बन्धी झगड़े बहुत कम और दूर की बात रहे हैं, परन्तु कभी-कभी हो भी जाते हैं। ऐसा होने पर तो यहूदा की ताड़ना उपयुक्त है: "उस विश्वास के लिए पूरा यत्न करो जो पवित्र लोगों को एक ही बार सौंपा गया था" (यहूदा 3)। इस कारण, झूठे शिक्षकों के साथ "पौलुस और बरनबास का... बहुत झगड़ा और वाद-विवाद हुआ" (प्रेरितों 15:2)।

परन्तु, मण्डलियों के बहुत से विवाद जो मैंने देखे हैं, उनमें सिद्धांतों से अधिक व्यक्तित्व की लड़ाई होती है। कहीं-कहीं विचारों में भिन्नता थी कि कोई काम किस प्रकार किया जाना चाहिए। कहीं किसी को लगा (सही या गलत) कि उसके साथ दुर्व्यवहार हुआ था। बहुत से मामलों में, यदि मामला वचन के अनुसार सुलझा लिया गया,[5] तो उसमें केवल गिनती के लोग ही शामिल हुए होंगे; परन्तु झगड़ा करने वालों ने लोगों को अपनी ओर कर लिया, और सारी मण्डली में वह झगड़ा बढ़ गया। चतुराईपूर्ण युक्तियों से मण्डली में गड़बड़ियां फैलाने वालों को यह याद रखना चाहिए कि परमेश्वर की घृणा की सूची में सबसे ऊपर "भाइयों के बीच में झगड़ा उत्पन्न करने वाला मनुष्य" ही है (नीतिवचन 6:16,19)।[6]

यदि विवाद में शिक्षा सम्बन्धी कोई आवश्यक सिद्धांत आता है, तो हमें पौलुस के उदाहरण का अनुकरण करना चाहिए और "उनके अधीन होना ...एक घड़ी भर न (मानें), इसलिए कि सुसमाचार की सच्चाई... बनी रहे" (गलतियों 2:5)। दूसरी ओर, यदि कोई विवाद भावनाओं के आहत होने या विचारों की भिन्नता पर है, तो "हम उन बातों का प्रयत्न

करें जिन से मेल मिलाप और एक दूसरे का सुधार हो'' (रोमियों 14:19)। आइए अपने कुचले हुए अहम को भूलने और दूसरों की बुद्धि से लाभ लेने को तैयार रहें। जिस कलीसिया के लिए यीशु ने अपनी जान दे दी, उसका मेल और मिलाप (प्रेरितों 20:28) किसी भी रूप में हमारी भावनाओं और विचारों से अधिक महत्वपूर्ण है।

क्या सहायता की उम्मीद करना सही है? (15:2)

जब अन्ताकिया की कलीसिया में विवाद उठा, '' तो यह ठहराया गया, कि पौलुस और बरनबास, और हम में से कितने और व्यक्ति इस बात के विषय में यरूशलेम को प्रेरितों और प्राचीनों के पास जाएं''(आयत 2)। मैं जानता हूं कि यह एक विशेष स्थिति थी जिसमें बाइबल का सिद्धांत और आत्मा से प्रेरणा पाए हुए लोग (प्रेरित) शामिल थे। विवाद उठने पर बुनियादी तौर पर हमारे लिए नये नियम के साथ किसी बात को मिलाना वैसे ही है जैसे अन्ताकिया के भाइयों ने यरूशलेम में प्रेरितों के साथ बात की थी। परन्तु, मुझे नहीं लगता कि वचन के सामान्य सिद्धांत से कुछ हटकर वचन का विरोध होता हो। यद्यपि हर मण्डली स्वतन्त्र (स्व-शासित) है,[7] परन्तु एक मण्डली के अगुओं को यह अनुमति है कि वे किसी विवाद के हल के लिए बाहर से सहायता की अपेक्षा कर सकते हैं।

सामान्यत: ऐसा अप्रत्यक्ष रूप से होता है, जैसे झगड़े में शामिल लोग परमेश्वर का भय मानने वाले कुछ ऐसे लोगों की सलाह चाहते हैं जिनके फैसले का वे सज़्मान करते हैं। मुझे ऑस्ट्रेलिया की एक बात याद आती है जब मेरा भाई कोय और मैं एक भाई से यह पूछने के लिए गए कि इस सज़्बन्ध में उसका क्या विचार है कि हमें क्या करना चाहिए। तथापि, कभी-कभी, प्रत्यक्ष सहायता की इच्छा की जाती है। मैंने मण्डलियों की सभाओं में देखा है कि जब उस क्षेत्र के सज़्माननीय भाइयों को कहा गया कि विरोधी विचारों के बीच वे मध्यस्थता करें। बाहर से आने वाले भाइयों को उन मण्डलियों के झगड़े के सज़्बन्ध में उन पर कोई अधिकार नहीं था, परन्तु वे उन परिस्थितियों को जो झगड़े का कारण बनीं, झगड़े में लिप्त मण्डलियों की अपेक्षा स्पष्ट रूप से देख सकते थे।[8]

मैं आपको यह नहीं बता सकता कि बाहर से सहायता कब लेनी चाहिए और कब नहीं। मैं केवल इतना ही कह रहा हूं कि यदि आपने मण्डली के किसी झगड़े को निपटाने का पूरा यत्न कर लिया है और फिर भी वह अनसुलझा है, तो घमण्ड त्याग कर दूसरों से सहायता लें।

यह ज़ोर देने के लिए कि प्रेरितों 15 की घटनाएं कलीसिया की समस्याओं के समाधान के लिए *अतिरिक्त कलीसियाई संगठनों* की स्थापना को उचित नहीं ठहरातीं, एक उपयुक्त स्थान है। साज़्प्रदायिक कलीसियाएं कॉन्फ्रेंसों तथा कन्वेंशनों को सही ठहराने के लिए प्रेरितों 15 का उपयोग करती हैं। कैथोलिक चर्च यरूशलेम की सभा को ''प्रथम सार्वभौमिक परिषद'' कहती है। तथापि, प्रेरितों 15 की स्थिति ऐसी नहीं थी जिसमें कलीसिया के मुद्दों पर वोट डालने के लिए मण्डलियों की ओर से अगुवे (प्रतिनिधि) भेजे गए हों। बल्कि, एक

मण्डली के पुरुष ही दूसरी मण्डली में गए। यहां तक कि डिनोमिनेशनल लेखक भी समझते हैं कि यह कलीसिया की कोई अतिरिक्त परिषद या कॉन्फ्रेंस नहीं थी:

> एकत्र होना डिनोमिनेशनल अर्थ में ''चर्च काउंसिल'' नहीं था... प्रत्येक स्थानीय कलीसिया स्वतन्त्र थी।
>
> तथाकथित यरूशलेम की सभा कलीसिया की सामान्य सभाओं से, इसके इतिहास से, इसके संविधान से, या इसके उद्देश्य से किसी भी प्रकार मेल नहीं खाती। यह अभिषिक्त हुए प्रतिनिधियों की कन्वेंशन नहीं थी, बल्कि अन्ताकिया की कलीसिया से आए प्रतिनिधि मण्डल को स्वीकार करने के लिए यरूशलेम की सारी कलीसिया की सभा थी।

क्या मैं इतना बड़ा हूं कि घमण्ड को निगल सकूं? (15:2,3)

मैंने पहले ही घमण्ड का उल्लेख किया है, परन्तु इस परामर्श को दोहराना लाभदायक है: इतने बड़े हो जाएं कि यदि आपको अपने घमण्ड को भी निगलने की आवश्यकता पड़े तो आप उसे निगल सकें। यहां हमें एक ऐसे व्यक्ति का सज़्पूर्ण उदाहरण मिलता है जो बिल्कुल ऐसा ही करने का इच्छुक था। जब अन्ताकिया की कलीसिया ने यह देखने के लिए कि उस विषय पर अगुओं का क्या विचार है, यरूशलेम में लोग भेजे (आयत 2) तो यह पौलुस के मुंह पर एक चांटे की तरह था। वह इस विषय पर बोलने के लिए यरूशलेम में रहने वाले किसी भी प्रेरित के समान योग्य था। बाद में उसने ज़ोर दिया कि जब वह यरूशलेम गया, तो बाइबल सज़्बन्धी सच्चाइयों को समझने में उनमें से किसी का योगदान नहीं था (गलतियों 1:17; 2:6)। फिर, पौलुस यरूशलेम जाने के लिए सहमत क्यों हुआ? गलतियों 2:2 में उसने बताया कि ''मेरा जाना ईश्वरीय प्रकाश के अनुसार हुआ।'' किसी न किसी प्रकार, परमेश्वर ने इस प्रेरित को बताया कि एकता की खातिर उसे वैसे ही करना चाहिए जैसा उसने अन्ताकिया के भाइयों के कहने पर किया कि उसे यरूशलेम जाना चाहिए (प्रेरितों 15:3)। कोई बड़ा आदमी ही ऐसा कर सकता है। नीतिवचन 16:18 कहता है कि ''विनाश से पहिले गर्व'' होता है। आम तौर पर, घमण्ड का होना मण्डली के विनाश का कारण बनता है। इसलिए इतने बड़े हो जाएं कि आप अपने घमण्ड को निगल सकें।

क्या मैं इस बारे में बात करने का इच्छुक हूं? (15:3-5)

विवाद के प्रति जो व्यक्ति ''हटने'' की बात पर भरोसा रखता है, उसका उत्कृष्ट उज़र यह है: ''मैं इस विषय में बात नहीं करना चाहता!'' पौलुस और बरनबास के बारे में यह बात सत्य नहीं थी:

सो मण्डली ने उन्हें कुछ दूर तक पहुंचाया;[9] और वे फीनीके और सामरिया से होते हुए अन्यजातियों के मन फेरने का समाचार सुनाते गए, और सब भाइयों को बहुत आनन्दित किया।[10] जब यरूशलेम में पहुंचे,[11] तो कलीसिया और प्रेरितों और प्राचीन उनसे आनन्द के साथ मिले,[12] और उन्होंने बताया, कि परमेश्वर ने उनके साथ होकर कैसे-कैसे काम किए थे (आयत 3,4)।

स्पष्टतया, यह एक सार्वजनिक सभा थी जिसमें पौलुस और बरनबास को अपने काम के बारे में बताने की अनुमति दी गई थी और जिसके दौरान यहूदी शिक्षा पर ज़ोर देने वाले शिक्षकों को भी बोलने की अनुमति दी गई थी (आयत 5)।

पौलुस और बरनबास ने समस्या के विषय पर बोलने के लिए प्रत्येक अवसर का लाभ उठाया। गलतियों 2 प्रेरितों 15 की आयत 5 और 6 से 29 आयतों के बीच की सार्वजनिक सभा की ही घटना बताती है, कि पौलुस और बरनबास यरूशलेम की कलीसिया के अगुओं से एकांत में मिले। विवाद के विषयों पर खुल कर चर्चा करने पर, उन्होंने पाया कि उनके विचार मिलते-जुलते थे (जैसी हमें अपेक्षा होगी कि आत्मा की प्रेरणा पाए हुए व्यक्तियों ने शिक्षा सम्बन्धी विषयों पर चर्चा की)। "... तो याकूब, और कैफा, और यूहन्ना ने...[पौलुस] को और बरनबास को दाहिना हाथ देकर संग कर लिया..." (गलतियों 2:9)। समस्या के बारे में पौलुस और बरनबास के खुलकर बोलने की इच्छा से कलीसिया में शान्ति स्थापित होने वाली थी।

सभी विवादों का हल विचार-विमर्श से नहीं हो सकता, परन्तु एक बात निश्चित है कि *किसी भी* विवाद का हल दोनों पक्षों की ओर से विभिन्न दृष्टिकोणों से विचार-विमर्श करने की इच्छा के बिना नहीं हो सकता। जब आप एक भाई से असहमत होते हैं, तो विवाद के अपने विषय पर बात करने के लिए आमने-सामने बैठने का साहस करें।

क्या मैंने सुनना सीख लिया है? (15:6,7)

विवाद का सन्तोषजनक हल निकालने के लिए एक दूसरी सार्वजनिक सभा हुई: "तब प्रेरित और प्राचीन इस बात के विषय में विचार करने के लिए इकट्ठे हुए" (आयत 6)। बाद में, हमें पता चलता है कि "सारी कलीसिया" वहां थी (आयत 22; आयत 12 पर भी ध्यान दें)। आयत 7 कहती है, "तब पतरस ने बहुत वाद-विवाद के बाद खड़े होकर उनसे कहा...।" "बहुत वाद-विवाद के बाद" शब्दों पर झपटें मत।[13] पतरस, पौलुस, बरनबास, और याकूब के औपचारिक भाषणों के बाद, स्पष्टतया हर एक को बोलने का अवसर मिला था। हमारे साथ असहमत होने वालों के मुंह को बन्द करने से एकता प्राप्त नहीं की जा सकती। हर एक को जो उसके मन में है, इस समझ के साथ व्यक्त करने की अनुमति दें कि "*हर व्यक्ति के पास कुछ करने के लिए है; किसी का भी अपना ढंग नहीं है।*"

आइए इस परामर्श पर ध्यान दें: दूसरे बोलते हैं, हमें उनकी सुननी चाहिए। बुद्धिमान ने कहा है ''जो बिना बात सुने उज़र देता है, वह मूढ़ ठहरता है, और उसका अनादर होता है'' (नीतिवचन 18:13)। जब दूसरे बोल रहे होते हैं, तो हम में से अधिकतर सुनने के बजाय उस पर विचार कर रहे होते हैं जो उसके बाद प्रतिक्रिया में हमने कहना होता है। सुनना सीखें, वास्तव में सुनना केवल अपने कानों से ही नहीं, बल्कि अपने हृदय से भी सीखें। मनोवैज्ञानिक हमें बताते हैं कि कई बार बच्चे दाने थूक देते हैं क्योंकि उन्हें दानों का स्वाद अच्छा नहीं लगता, परन्तु कई बार वे अप्रसन्नता व्यक्त करने के लिए भी दाने थूक देते हैं। बड़े लोगों में कोई खास अन्तर नहीं होता। यदि आप जांचने वाले कान से सुन रहे हैं, तो आप पाएंगे कि वास्तविक समस्या विचाराधीन ''मुद्दा'' नहीं, बल्कि कुछ और ही है।

क्या मैं लोगों के बजाय मुद्दों पर ध्यान देता हूं? (15:7-11)

जब सब अपने-अपने विचार व्यक्त कर रहे थे, तो पतरस खड़ा हुआ और बोलने लगा (आयत 7)। हमने पिछले पाठ में उसके प्रवचन का अध्ययन किया था, इसलिए मैं उसे दोहराऊंगा नहीं परन्तु उसे पढ़ने के लिए कुछ पल अवश्य बिताएं (आयतें 7-11)। पतरस ने अन्ताकिया जाने वाले शरारतियों का नाम कितनी बार लिया? उज़र है ''शून्य बार।'' पौलुस, बरनबास, और याकूब के भाषणों पर नज़र डालें (आयतें 12-29)। उन लोगों ने यहूदी शिक्षा देने वालों का नाम कितनी बार लिया? अन्ताकिया की कलीसिया के नाम पत्र में इस प्रकार उल्लेख हुआ, कि ''...हम में से कितनों ने... तुज़्हें... घबरा दिया...'' (आयत 24), परन्तु किसी का भी व्यक्तिगत नाम नहीं लिया गया। पतरस, पौलुस, बरनबास, और याकूब ने व्यक्तियों पर नहीं, बल्कि विवादों पर ध्यान केन्द्रित किया। मेरे अनुभव में, नाम पुकारने से कभी भी भलाई[14] नहीं निकलती बल्कि अक्सर बहुत बड़ी हानि ही होती है। यह विवाद से ध्यान हटा देती है, और लूका 16 के गड्ठे जैसी एक बहुत बड़ी खाई बन जाती है जिसे पार नहीं किया जा सकता। इस वचन से सीख लें: सिद्धांतों की बात कीजिए, व्यक्तित्वों की नहीं।

क्या मैं पुस्तक के साथ जुड़ा हुआ हूं? (15:12-18)

पतरस के प्रवचन ने भीड़ को चुप करा दिया। फिर बरनबास[15] और पतरस ने अपनी मिशनरी यात्रा के बारे में बताया। लूका ने उनकी बातें दर्ज नहीं कीं, क्योंकि उसने पहले ही अध्याय 13 और 14 में विस्तार से बता दिया था। एक बार फिर पौलुस और बरनबास ने ''परमेश्वर ने उनके द्वारा ...कैसे-कैसे बड़े काम किए'' को जोड़ दिया। परन्तु, इस बार, उनका ज़ोर इस बात पर था कि ''परमेश्वर ने उनके द्वारा... बड़े *चिह्न, और अद्भुत काम*''

(आयत 12) दिखाए। ये आश्चर्यकर्म इस बात का प्रमाण थे कि परमेश्वर उनके साथ था (इब्रानियों 2:4) और इसलिए, अन्यजातियों में उनकी सेवकाई परमेश्वर की स्वीकृति से थी।

उनके बोलने के बाद, याकूब की बारी थी, जो प्रभु का सौतेला भाई था।[16] याकूब ने उस सबकी समीक्षा की जो पहले कहा गया था: "हे भाइयो, मेरी सुनो। शमौन[17] ने बताया, कि परमेश्वर ने पहिले पहिल अन्यजातियों पर कैसी कृपादृष्टि की, कि उन में से अपने नाम के लिए एक लोग बना ले" (आयतें 13,14)। उसकी शज़्दावली ने सज़्भवत: कइयों को चौंका दिया। यहूदी अन्यजातियों की तुलना में "परमेश्वर के नाम के लोग" थे। अब परमेश्वर "*अन्यजातियों*...में से अपने लिए एक लोग" बना रहा था!

यह दिखाने के लिए कि कुरनेलियुस और उसके घराने का मसीही बनना भविष्यवाणी का पूरा होना था, याकूब फिर परमेश्वर के वचन की ओर मुड़ा। उसने आमोस 9:11,12 से उद्धृत करते हुए कहा (आयतें 16-18) "और इस से भविष्यवक्ताओं की बातें मिलती हैं" (आयत 15ख)।[18] जब कलीसिया में कोई विवाद उत्पन्न होता है, तो हमें पुस्तक अर्थात बाइबल के निकट ही रहना चाहिए। तब भी जब असहमति डॉक्टरिन सज़्बन्धी न हो, बाइबल में दिए गए सिद्धांत उस समस्या का समाधान करने में सहायक होंगे और यह निश्चित करने में भी सहायक होंगे कि हम परमेश्वर की इच्छा को पूरा करने पर ध्यान केन्द्रित रखें।

सारांश

इस पाठ के आरज़्भ में, मैंने वाद-विवाद के प्रति अपनी नापसंदगी को स्वीकार किया था। इस पाठ को समाप्त करते हुए, मैं आप से पूछता हूं कि वाद-विवाद के सज़्बन्ध में *आप* क्या महसूस करते हैं? जब भाई लोग आपस में असहमत होते हैं तो आपकी *प्रतिक्रिया* क्या होती है? क्या आप भयभीत हो जाते हैं? क्या आप टुकड़ों में बंट जाते हैं? क्या आप छोड़ जाना चाहते हैं? यदि हमें इस और अगले पाठ में और कुछ नहीं मिला, तो मुझे आशा है कि हम देख सकते हैं कि परमेश्वर की सहायता से, विवाद का निपटारा ऐसे किया जा सकता है जिससे उसे महिमा मिले।

प्रवचन नोट्स

6 से 29 आयतों की सार्वजनिक सभा की रूपरेखा इस प्रकार दी जा सकती है: (1) पतरस का तर्क (आयतें 7-11), (2) बरनबास और पौलुस की रिपोर्ट (आयत 12), याकूब की स्वीकृति (आयतें 13-29)।

पाद टिप्पणियां

[1]यदि इस विवाद से सही ढंग से न निपटा गया होता, तो यह बहुत सी मण्डलियों में फैल जाता। [2]पुन:, यह

मानते हुए कि वही (अथवा वैसी ही) घटना इस पद में भी शामिल है, मैं गलतियों 2 से कुछ विवरणों को जोड़ूंगा। [3]यरूशलेम की कलीसिया में उठने वाले विवाद के साथ प्रेरितों ने कैसे निपटा, पर "प्रेरितों के काम, भाग-III" में पहले पाठ में नोट्स देखिए। [4]एक या दो अपवाद हो सकते हैं (कई तो विवाद को खूब बढ़ाते लगते हैं), परन्तु साधारणत: यह कथन सत्य है। [5]अगला पाठ देखिए। [6]हम आम तौर पर कहते हैं कि "परमेश्वर पाप से घृणा करता है, पापी से नहीं।" इस मामले में, वचन कहता है कि परमेश्वर *उस व्यक्ति* से घृणा करता है "जो भाइयों के बीच झगड़ा उत्पन्न करता है।" आध्यात्मिक उत्पाती होना वास्तव में घोर पाप है। [7]प्रेरितों के काम पर इस शृंखला में अगले एक भाग में प्रेरितों 20:28 पर नोट्स देखिए। [8]बाहर की सहायता चाहने का एक और "प्रत्यक्ष" ढंग है। कई बार, मुझे एक मण्डली के अगुओं द्वारा शिक्षा सम्बन्धी या व्यावहारिक मुद्दे पर जो मण्डली को परेशान कर रहा था, एक पाठ या पाठों की शृंखला पर प्रचार करने के लिए कहा गया है। विनम्रता और प्रेम के स्वभाव में किया गया, ऐसा कार्य कई बार अशांत लहरों को शांत कर सकता है। [9]"उन्हें कुछ दूर तक पहुंचाया" संकेत देता है कि कलीसिया ने उन्हें आशीर्वाद देने के साथ-साथ उनकी यात्रा में काम आने वाली आवश्यक वस्तुएं भी उपलब्ध करवाईं। [10]फीनीके और सामरिया के भाइयों में अन्यजाति मसीहियों के विरुद्ध वैसी कोई पूर्वधारणा नहीं थी जैसी यरूशलेम में कुछ भाइयों के मन में थी। इन क्षेत्रों में कलीसियाएं यूनानी भाषा बोलने वाले यहूदी मसीहियों के सुसमाचारीय प्रयासों का परिणाम थीं (8:5-25;11:19)। [11]यह लगभग तीन-सौ-मील की यात्रा थी, सो इसमें कुछ समय लगा होगा। [12]ध्यान दें कि यरूशलेम की कलीसिया का नेतृत्व प्रेरितों के अस्थाई पद से लगातार प्राचीनों की स्थाई स्थिति तक जारी रहा। प्रेरितों 15 में प्राचीन निर्णय लेने की प्रक्रिया की हर बात में शामिल थे (आयतें 2,4,6,22,23)। [13]वाक्पटुता काफ़ी तेज थी अर्थात सभा में काफ़ी शोर था। [14]परमेश्वर की प्रेरणा प्राप्त लेखकों ने कई बार विरोधियों के नाम का उल्लेख किया (1 तीमुथियुस 1:20; 3 यूहन्ना 9; इत्यादि), इसलिए हम इस सद्भावना की उपेक्षा नहीं कर सकते कि ऐसे अवसर हो सकते हैं जब झूठे शिक्षकों के नाम का उल्लेख आवश्यक हो। परन्तु, *पवित्र आत्मा* ने नये नियम के लेखकों को ऐसा करने के लिए सही समय बताया। क्योंकि मुझे आत्मा की वह प्रेरणा नहीं मिली, इसलिए मैं नाम लेने की बात से दूर ही रहना पसन्द करूंगा। [15]लूका ने बरनबास का नाम पहले दिया क्योंकि यरूशलेम में, बरनबास का अधिक आदर था। [16]प्रेरितों 12:17; 21:18; 1 कुरिन्थियों 15:7; गलतियों 1:19; 2:12; याकूब 1:1. [17]याकूब ने शमौन (पतरस) के इब्रानी नाम का इब्रानी रूप प्रयुक्त किया। हो सकता है कि यह (और यह तथ्य कि याकूब ने उसका उल्लेख नहीं किया जो बरनबास और पौलुस ने कहा) उन यहूदियों को जो "खतना किए हुए दल" की अगुआई कर रहे थे, आकर्षित करने के लिए जान-बूझ कर कहा गया हो। [18]याकूब ने यशायाह 2:2-4; 49:6; और मीका 4:1-4 जैसी बहुत सी भविष्यवाणियां उद्धृत की होंगी (क्योंकि लूका ने हर एक प्रवचन का संक्षिप्त रूप ही दर्ज किया)।